THE TIMES OF INDIA

Date:07-09-22

The Meaning Of Being Fifth

Of all major economies India's has been the least fiscally boosted and so most resilient now

Krishnamurthy Subramanian, [The writer was Chief Economic Adviser, GoI and is Professor at ISB]

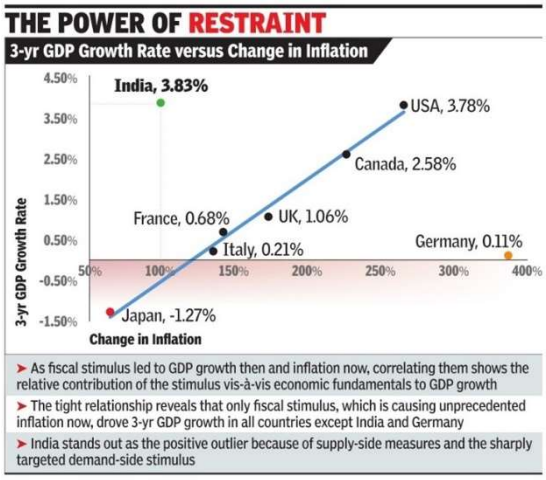

In the 75th year of our Independence, we have overtaken our colonial masters to become the fifth largest economy in the world. As the Vshaped recovery after Covid contributed to this important milestone, now is a good point to analyse the path of the Indian economy. For this purpose, examine growth over a three-year period from 2019 to 2022 for the April-June quarter.

Among all major economies, India's growth at 3. 83% in the three-year period is highest followed by US 3. 78%, Canada 2. 58%, UK 1. 06%, France 0. 68%, Italy 0. 21%, Germany 0. 11% and Japan -1. 27%. However, India's growth rate being the highest over the three-year period reveals only a partial positive picture.

Fiscal boost's impact: To understand the complete picture, recognise that countries across the world expanded fiscal spending enormously following Covid. So, the adjoining figure correlates GDP growth over a three-year period with the increase in inflation over the last one year when compared to the historical average of inflation in the country from 1960 to 2021.

We must use inflation over the last year as the impact of the huge fiscal expansion has manifested on inflation over the last year. Ignoring the outliers, India and Germany for now, we see a tight relationship between three-year growth and increase in inflation. This relationship manifests the fact that fiscal expansion prevented a more precipitous decline in GDP growth in these countries, on the one hand, and fuelled unprecedented inflation, on the other.

Now focus on the outlier of interest: India. India's three-year growth is the highest even when inflation over the last one year is almost the same as that historically. For the other countries, growth during the Covid period has been driven exclusively by their fiscal stimulus. In contrast, India's three-year growth being highest stems from fiscal spending, which was sharply targeted, and from supply-side measures.

India emerged as the positive outlier because of the sagacious policy that the central government implemented during Covid. This inference gets buttressed when we analyse the various components of GDP growth.

Three engines of growth: Consumption, investment and exports, which represent the three key engines of the economy, have all grown strongly at about 26%, 20% and 15% respectively over the last year. Even over a three-year period, consumption and exports have grown at about 9% and 20% respectively. While investment has grown at 3. 6% over the three-year period, this is expected because private investment is impacted far more by the economic uncertainty engendered by the Covid crisis and the Ukraine war than any other component of GDP.

The growth in investment of 20% over last year signals that investors are now comfortable to start investing. Collectively, the three key engines – consumption, investment, and exports – have grown at about 22% over the last year and 9% over a three-year period.

As all economies across the world are still emerging out of the Covid shock, fiscal policy must continue to be supportive of growth. In this context, government spending growing at 1. 3% over the last year needs attention given the compelling case that has been made for fiscal policy to be counter-cyclical in India.

Capex is the key: As the multiplier effect of capital expenditure is much higher and such expenditure does not lead to higher inflation, the budgeted capital expenditure must be front-loaded so that its beneficial effects add to the improving strength of the economy.

The rise in imports at 37. 2% year-onyear and 30. 3% over a three-year period need to be seen in the proper context. As oil imports contribute about a quarter of India's imports and oil imports have about doubled over the last year, increase in the oil import bill itself contributes about two-thirds of the 37% increase in imports over the last year. It is exogenous and, therefore, cannot be controlled. As a counterfactual exercise to underline the strength of the economy, if imports had grown only at the rate of the exports, then the GDP growth would have been about 20% over the last year and about 9% over the three-year period.

Current account deficit fears overblown: While some commentators may express concerns about the rising current account deficit (CAD), we must watch imports carefully but sit tight for now. Historically, India has faced a macroeconomic crisis only when faced with a triple whammy, a high CAD to GDP ratio – one greater than 2. 5% – combined with double-digit inflation and very high fiscal deficit.

With inflation moderating and tax revenues looking comfortable to avoid any escalation in the fiscal deficit, any worries of impending macro-instability due to high CAD are overblown. To continue providing momentum to the economy, the reforms announced as part of Atmanirbhar Bharat policy must be seen through to completion, especially because implementing the rules for labour law reforms would significantly help the growth of manufacturing sectors, and privatisation would add to economic efficiency. In sum, the policy focus on growth that has helped India emerge as the fifth largest economy must continue.

दैनिक भास्कर

Date:07-09-22

समय आ गया है स्टार्टअप अपनी रणनीतियों की समीक्षा करें

एम. चंद्र शेखर, (सहायक प्राध्यापक हैदराबाद)

कोई भी बिजनेस शुरू करना हो तो सबसे पहले वित्तीय मदद और मानव संसाधनों की जरूरत होती है। हालांकि पहला कदम तो आइडिया है। वहीं स्टार्टअप के लिए भी यही दो चीजें चाहिए। स्टार्टअप में फंडिंग पाने के लिए अलग-अलग स्टेज होती हैं और इसकी शुरुआत 'एफएफएफ' यानी फैमिली, फ्रेंड्स और फूल से होती है। यहां फूल से तात्पर्य ऐसे लोगों से है, जो उस शुरुआती स्टार्टअप में जोखिम का अनुमान नहीं लगा पाते। फिर एंजिल इंवेस्टर, वेंचर कैपिटलिस्ट, ग्रोथ कैपिटल और फिर आखिरी है आईपीओ। पिछले दशक में हमने देखा है कि कई नामचीन स्टार्टअप ने चीन, हांगकांग, जापान और अमेरिका से निवेश हासिल किया है। हालांकि पिछले कुछ समय में आई आर्थिक मंदी का असर अब स्टार्टअप जगत में साफ दिखाई दे रहा है। बिजनेस को आगे बढ़ाने के लिए पूंजी की कमी हो रही है, यहां तक कि बिजनेस ऑपरेशंस पर भी असर आ रहा है। दुनियाभर में महंगाई दर में अप्रत्याशित वृद्धि के कारण ब्याज दरों पर असर पड़ा है और स्टार्टअप्स के लिए वित्तीय संसाधन जुटाना चुनौती बनता जा रहा है।

कारण भले बाहरी हों, पर उनका दबाव घरेलू स्टार्टअप भी पड़ रहा है और अब स्टार्टअप विलय और अधिग्रहण (मर्जर-एक्विजिशन) की ओर बढ़ रहे हैं। संकट वहां काम करने वाले लोगों पर भी है। और हुनरमंद लोगों को काम पर रखने की स्थिति में फिलहाल स्टार्टअप नहीं हैं। कोविड के दौरान वर्क फ्रॉम होम से लोगों की हाइब्रिड मॉडल पर काम करने की आदत पड़ गई है। वर्क फ्रॉम ऑफिस के दबाव के कारण हुनरमंद लोगों को अपने साथ जोड़े रखना भी एक चुनौती है। कुछ चुनिंदा स्टार्टअप को छोड़ दिया जाए, तो लगभग सबके यही हाल हैं और वे भी कर्मचारियों को भत्ते 'स्टॉक विकल्प' के तौर पर दे रहे हैं।

स्टार्टअप-बिजनेस में मूलभूत अंतर इसको चलाने वालों का है। ज्यादातर स्टार्टअप युवा चला रहे हैं और इनकी कोई व्यापारिक पृष्ठभूमि नहीं होने के साथ बिजनेस का कोई खासा अनुभव नहीं है। ऐसी मुश्किल घड़ी में स्टार्टअप को अनुभवी मेंटर और बिजनेस दिग्गजों के साथ और मार्गदर्शन की जरूरत है। पिछले एक दशक में स्टार्टअप के लिए वित्तीय मदद जुटाना काफी हद तक आसान रहा और इसलिए इनके लिए पैसों के कारण अतिरिक्त छूट, लुभावने ऑफर्स, कैशबैक, रिवॉर्ड पॉइंट्स आदि देना आसान रहा और वे डंपिंग कैश बन गए। पर आज हालात बदल चुके हैं। चुनौती इन हालात में खुद को ढालने की है।

अंतरराष्ट्रीय हालात के मद्देनजर दुनियाभर के स्टार्टअप बुरे दौर से गुजर रहे हैं। स्टार्टअप को इंसेंटिव पॉलिसी से जुड़ी नीतियों को फिर से खड़ा करने की जरूरत है और इसके लिए रचनात्मक कदम उठाने होंगे, ताकि हुनरमंद लोगों को अपने साथ जोड़ सकें और आत्मविश्वास पैदा हो। इस समय सबसे जरूरी है कि लागत पर सख्ती बरती जाए और कैश बैलेंस बना रहे। इसके अलावा स्टार्टअप्स को ग्राहकों के बदलते व्यवहार और खरीदारी के पैटर्न को भी समझने की जरूरत

है, उन्हें चाहिए कि वे इस हिसाब से अपनी सेल्स रणनीतियां तय करें। जहां तक संभव हो जरूरी तकनीकी में भारी-भरकम निवेश करने के बजाय उसे किराए पर लेना चाहिए। समय आ गया है कि स्टार्टअप कठिन हालात को अवसरों की तरह देखें। समय के साथ जैसे-जैसे बिजनेस का पहिया सुचारु रूप से चलने लगेगा, स्थितियां सामान्य होने लगेंगी।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:07-09-22

परमाणु ऊर्जा के लिए नए सूर्योदय के संकेत

अजय शाह

एक कमजोर आर्थिक आधार और फुकुशिमा हादसे ने परमाणु ऊर्जा को लेकर दुनिया भर में निराशा का माहौल बनाया है। यह परिदृश्य बदल रहा है। तकनीकी सुधार सुरक्षा मानकों को सशक्त बनाने के साथ ही कारोबारी व्यवहार्यता बढ़ा रहे हैं। यूक्रेन युद्ध और वैश्विक तापवृद्धि (ग्लोबल वॉर्मिंग) ने जीवाश्म ईंधनों से पीछा छुड़ाने की महत्ता नए सिरे से रेखांकित की है। इस बीच अमेरिका में 50 मेगावॉट के स्मॉल मॉड्युलर रिएक्टर (एसएमआर) के डिजाइन को नियामकीय मंजूरी मिली है।

यदि ये उत्पाद व्यापक उत्पादन स्तर पर आते हैं तो कीमतों के मामले में बहुत लाभ मिलेगा। वर्ष 1979 में अमेरिका के थ्री माइल आइलैंड, 1986 के सोवियत रूस में चेर्नोबिल और विशेषकर 2011 में जापान के फुकुशिमा हादसे के बाद परमाणु ऊर्जा से जुड़े सुरक्षा पहलुओं को लेकर संदेह खासा गहराता गया। चेर्नोबिल को तो एक अधिनायकवादी देश में लोक सेवकों की अक्षमता के रूप में समझाया जा सकता है, लेकिन फुकुशिमा को लेकर ऐसी कोई दलील नहीं, जो दुर्घटना एक स्वस्थ एवं उदार लोकतंत्र में घटी। वर्ष 2011 के बाद जर्मनी ने अपने सभी परमाणु संयंत्र बंद करने का फैसला किया। पूर्व जर्मन चांसलर एंगेला मर्केल स्वयं क्वांटम केमिस्ट्री में पीएचडी किए हुए थीं और उन्होंने इससे जुड़े मुद्दों पर अपने भौतिकशास्त्री पति जोआकिम सावर से व्यापक मंत्रणा भी की थी। पहले उन्हें यही लगता था कि परमाणु ऊर्जा को लेकर संशयवादी लोग उससे जुड़े जोखिमों की सही समझ नहीं रखते, लेकिन फुकुशिमा हादसे के बाद उनका रुख भी बदल गया।

परमाणु ऊर्जा के लिए आर्थिक आधार भी कमजोर था। ब्रिटेन का ही उदाहरण लें। वहां 3,200 मेगावॉट के हिन्कले पॉइंट सी परमाणु संयंत्र को 2008 में हरी झंडी दिखाई गई। उसका निर्माण 2017 में जाकर शुरू हो पाया और 2017 तक उसके पूर्ण होने का अनुमान है। उसकी लागत 25 अरब ब्रिटिश पाउंड बताई जा रही है। यदि विकसित देशों की बात करें तो केवल फ्रांस में ही परमाणु ऊर्जा महत्त्वपूर्ण बनी हुई है।

हालांकि, हाल के वर्षों में परमाणु ऊर्जा के प्रति दिलचस्पी बढ़ी है। दरअसल, जीवाश्म ईंधनों में सऊदी अरब से लेकर रूस जैसे अधिनायकवादी देशों का ही दबदबा है, जिसके चलते भू-राजनीतिक जोखिम उत्पन्न होते हैं। साथ ही जहां ऊर्जा भंडारण (स्टोरेज) और अक्षय ऊर्जा उत्पादन में उल्लेखनीय क्रांति हुई है, फिर भी परमाणु ऊर्जा के बिना कार्बन डाई

ऑक्साइड उत्सर्जन से मुक्ति की राह मिलना मुश्किल होगा। परंतु जोखिमों का क्या? चलिए, उनकी पड़ताल भी करते हैं। जब फुकुशिमा हादसा हुआ था तो परिदृश्य बहुत भयावह प्रतीत हुआ था। हालांकि समग्रता में देखें तो कुछ सकारात्मकता दिखती है। शोधकर्ताओं ने पाया है कि जापान में जितनी मौतें फुकुशिमा हादसे के चलते हुए थीं, उससे कहीं अधिक लोग परमाणु ऊर्जा उत्पादन पर रोक लगाने की वजह से मर गए। दूसरी ओर यदि यूरोप के पास परमाणु ऊर्जा का और अधिक सहारा होता तो पुतिन उस युद्ध को छेड़ने से कुछ हिचकते, जिसमें अभी तक 30,000 से ज्यादा लोगों की जान जा चुकी है। जहां पारंपरिक विशाल परमाणु संयंत्र मुश्किलों से दो-चार होते आए हैं तो इस मामले में प्रगति छोटे संयंत्रों के रूप में होती गई। पश्चिम में पनडुब्बियां और विमानवाहक पोत कई दशकों से छोटे परमाणु संयंत्रों का उपयोग करते आए हैं और उनका सुरक्षा रिकॉर्ड एकदम दुरुस्त और सटीक रहा है।

अब लागत की बात आती है। क्या बड़ों की तुलना में छोटे संयंत्रों की लागत कम आ सकती है? इसके लिए असेंबली लाइन यानी सुनियोजित श्रृंखला आधारित विनिर्माण की आवश्यकता होगी। अतीत में भी इसके उदाहरण दिखते हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जर्मनी ने पनडुब्बी समर कौशल के माध्यम से ब्रिटेन पर शिकंजा कसने का प्रयास किया। जुलाई से अक्टूबर, 1940 के दौरान मित्र गुट वाले देशों की 15 लाख टन क्षमता वाली पोत संपदा डूब गई। तब मित्र राष्ट्रों ने पोत निर्माण के लिए आधुनिक विनिर्माण की क्षमताओं का उपयोग किया। उससे पहले तक पोत हस्तशिल्प-कलात्मक ढंग से बनाए जाते थे। उस वक्त की नजाकत को भांपते हुए अमेरिकियों ने 10,000 टन क्षमता वाले एक सामान्य डिजाइन को मानक बनाते हुए उसे 'द लिबर्टी शिप' का नाम दिया। उन्होंने उसे असेंबली लाइन पर ही बनाया। वर्ष 1941 में बना पहला पोत 244 दिनों में बनकर तैयार हुआ और 1943 तक इस अवधि को घटाकर वे 39 दिनों तक ले आए।

हम परमाणु रिएक्टरों के मामले में वैसी ही यात्रा आरंभ करने के मुहाने पर हैं। छह वर्षों की मूल्यांकन प्रक्रिया के बाद अमेरिकी परमाणु नियामकीय आयोग (एनआरसी) ने एक स्मॉल रिएक्टर डिजाइन को स्वीकृति प्रदान की है। इस डिजाइन को वीओवाईजीआर (वॉयगर) नाम दिया गया है, जिसे अमेरिकी कंपनी न्यूस्केल ने तैयार किया है। यह अमेरिका में इस्तेमाल की स्वीकृति प्राप्त करने वाला सातवां रिएक्टर डिजाइन है। अमेरिकी इतिहास में इससे पहले केवल छह डिजाइनों के सिर ही ऐसी सफलता का सेहरा बंधा है। वॉयगर परमाणु रिएक्टर किसी साइट पर नहीं, बल्कि फैक्टरी में तैयार किया गया है। इसका प्रत्येक मॉड्यूल 4.6 मीटर चौड़ा, 23 मीटर लंबा और यह 50 मेगावॉट बिजली बनाता है। इसके सुरक्षा मानदंड भी पारंपरिक रिएक्टरों की तुलना में बुनियादी रूप से खासे बेहतर हैं, जिसमें पावर कटौती की स्थिति में परमाणु प्रक्रिया शांत पड़ जाती है।

मौजूदा आकलनों के हिसाब से भी यदि 600 मेगावॉट क्षमता के लिए 12 मॉड्यूल लगाए जाएं तो बिजली की लागत (विकसित देशों की स्थितियों के अंतर्गत) 41 डॉलर से 65 डॉलर प्रति मेगावॉट आवर (एमडब्ल्यूएच) के बीच आने का अनुमान है। यह अक्षय ऊर्जा के साथ सही तुलना की स्थिति में है, जिसकी लागत 30 से 45 डॉलर एमडब्ल्यूएच आती है। भारत में दोनों ही लागत (परमाणु और अक्षय ऊर्जा) संतुलित रूप से अधिक होंगी, जो एक देश के रूप में भारत के जोखिम और वित्तीय तंत्र की मुश्किलों को दर्शाती है।

जहां तक एसएमआर के विकास की बात है तो जीई हिताची परमाणु ऊर्जा और रॉल्स रॉयस इत्यादि फर्मों में इस पर काम हो रहा है। प्रतिस्पर्धा, नवाचार, व्यापक उत्पादन से मिली सीख और असेंबली लाइंस पर विनिर्माण जैसे पहलू इसके लागत ढांचे में लाभ प्रदान करने में सहायक होंगे।

भारत में अभी तक परमाणु उत्पादन उतना कारगर नहीं रहा। सरकारी सेक्टर समस्याओं से ग्रस्त है और निजी कंपनियों द्वारा बनाए परमाणु रिएक्टरों के आयात को लेकर भी प्रगति आवश्यक है। निःसंदेह अमेरिका-भारत के बीच हुए 2008 का परमाणु करार कूटनीति और राज्य-नीति की बड़ी जीत थी, लेकिन नागरिक परमाणु जवाबदेही एक अवरोध बनी हुई है। पश्चिम से आयातित बड़े परमाणु संयंत्र आर्थिक दृष्टि से आकर्षक नहीं। ऐसी स्थिति में भारत में विद्युत तंत्र ने शून्य उत्सर्जन लक्ष्य प्राप्ति के लिए अक्षय ऊर्जा और ऊर्जा भंडारण की जुगलबंदी पर दांव लगाया है।

यदि एसएमआर तकनीक चरणबद्ध रूप से कीमत मोर्चे पर गिरावट वाले रुख का संकेत देती है तो यह परिदृश्य बदल सकता है। हमारे लिए इस पर व्यापक समझ बनाना अभी शेष है। फिर भी, यदि यह कारगर रहता है तो भारत में कंपनियों को मुफीद लग सकता है। फैक्टरी के किसी कोने में लगा छोटा सा संयंत्र 50 मेगावॉट बिजली बनाने में जो सक्षम होगा।

इंजीनियरिंग नवाचार ही कार्बन संक्रमण के केंद्र में हैं। निराशावादी लोग दुनिया में जीवाश्म ईंधन के पदचिह्नों की ओर देखते हैं और इन उद्योगों पर नजर टेढ़ी करते हैं कि उन्हें कैसे तेजी से बंद किया जा सकता है। बहरहाल, जब सरकारें कार्बन उत्सर्जन से होने वाले नुकसान के अनुपात में करों का हथौड़ा चलाएंगी तो निजी ऊर्जा कंपनियां भी विकल्प तलाशेंगी। परिणामस्वरूप, अक्षय, परमाणु और ऊर्जा भंडारण में नवाचार और मांग संबंधी सक्षमता हमें चौंकाएगी। जहां तक भारत की बात है तो हमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी की उस चीज का आसानी से फायदा मिलता है जो दुनिया के किसी भी कोने में विकसित हो रही है, जैसा कि सोलर सेल के मामले में देखने को मिला था।

जनसत्ता

Date:07-09-22

शिक्षा की सुध

संपादकीय

इस शिक्षक दिवस पर प्रधानमंत्री ने ट्वीट करके घोषणा की कि प्रधानमंत्री स्कूल्स फार राइजिंग इंडिया यानी पीएम-श्री योजना के तहत देश के साढ़े चौदह हजार स्कूलों को विकसित और उन्नत किया जाएगा। यानी उम्मीद जगी है कि सरकार ने शिक्षा के क्षेत्र में बेहतरी लाने के लिए प्रयास शुरू कर दिया है। शिक्षा क्षेत्र की बदहाली किसी से छिपी नहीं है। शिक्षा संबंधी तमाम राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सर्वेक्षणों में बरसों से सरकारी स्कूलों में भवन, पीने के पानी, पाठ्य सामग्री, टाट-पट्टी आदि के अभाव के साथ-साथ अध्यापकों की बेहद कमी के तथ्य उजागर होते रहे हैं। फिर यह भी हकीकत किसी से छिपी नहीं है कि बजट में शिक्षा पर खर्च का प्रावधान आवश्यकता से काफी कम होने की वजह से स्कूलों की दशा में सुधार नहीं आ पा रहा। इसकी वजह से जो थोड़े सक्षम हैं वे अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजना बेहतर समझते हैं। इससे प्रोत्साहित होकर निजी स्कूलों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। मगर इसका नकारात्मक प्रभाव यह पड़ रहा है कि शिक्षा का अधिकार सांविधानिक संकल्प होने के बावजूद सभी बच्चों तक मुफ्त और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुंच सुनिश्चित नहीं हो पा रही। इसके चलते साक्षरता की दर अपेक्षित गति से नहीं बढ़ पाई है।

केंद्र सरकार इन तथ्यों से अनजान नहीं मानी जा सकती। हालांकि शिक्षा समवर्ती सूची का मामला है, जिसमें केंद्र और राज्य दोनों को साथ मिल कर काम करना होता है। जिन राज्यों में केंद्र से भिन्न राजनीतिक दल की सरकारें हैं वहां वे अक्सर स्कूलों की दुर्दशा का ठीकरा एक-दूसरे पर फोड़ती नजर आती हैं। मगर जिन राज्यों में केंद्र के सत्ताधारी दल की सरकारें हैं, वहां भी स्थिति बद से बदतर ही हुई है। आज स्थिति यह है कि कोई राज्य सरकार शिक्षा के क्षेत्र में बेहतरी को अपनी उपलब्धि के तौर पर नहीं गिना सकती। दिल्ली को अपवाद जरूर मान सकते हैं। दरअसल, सरकारी स्कूलों की दशा चिंताजनक होने के पीछे लंबी परंपरा चली आ रही है, जिसमें सरकारी स्कूलों के बजाय निजी क्षेत्र को स्कूल खोलने को प्रोत्साहन दिया गया। ऐसी इच्छुक कंपनियों, उद्यमों, संगठनों को सस्ती दर पर जमीन उपलब्ध कराई गई। मगर उस नीति ने शिक्षा को कारोबार में बदल दिया। अब धीरे-धीरे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पैसे वाले लोगों की पहुंच की चीज बन कर रह गई है। इस तथ्य से भी केंद्र सरकार अनजान नहीं। अच्छी बात है कि साढ़े चौदह हजार स्कूलों को विकसित और उन्नत करने का संकल्प लिया गया है, मगर इतने से शिक्षा के क्षेत्र में कितनी बेहतरी आएगी, देखने की बात है।

दरअसल, अब शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी सुविधाएं सरकारों की प्राथमिक सूची से निकल कर महज चुनावी रणनीति का हिस्सा बन गई हैं। हर विपक्षी दल चुनाव के वक्त शिक्षा की बदहाली रेखांकित करता देखा जाता है और सत्ता पक्ष इसे बेहतर बनाने का भरोसा दिलाता रहता है। अगर सचमुच केंद्र सरकार शिक्षा क्षेत्र में बेहतरी को लेकर संजीदा है, तो उसे पहले उन बुनियादी अवरोधों को हटाने का प्रयास करना चाहिए, जिसके चलते सरकारी स्कूल दुर्दशा के शिकार हैं। नई योजना बना कर महज स्कूलों का रंग-रोगन कर देने या उनमें कुछ बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करा देने भर से वहां पढ़ाई-लिखाई का माहौल बेहतर हो जाने का भरोसा नहीं दिलाया जा सकता। साढ़े चौदह हजार स्कूल ही सही, अगर उनमें गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का माहौल बनता है, तो आगे का रास्ता आसान हो सकता है।

Date:07-09-22

भारत-ब्रिटेन संबंधों की नई दिशा

ब्रह्मदीप अलूने

ब्रिटेन की नई प्रधानमंत्री लिज ट्रस ने करीब एक दशक पहले एक किताब लिखी थी 'ब्रिटैनिया अनचेंज्ड'। उसमें उन्होंने ब्रिटेन की मजबूती के लिए क्रांतिकारी बदलाव लाने और मुक्त बाजार की परिकल्पना की थी। उसके बाद लिज ट्रस को ब्रिटेन में संभावनाओं वाली नेता के रूप में पहचान मिली और अंतत: उन पर कंजरवेटिव पार्टी ने भी भरोसा जताया। मगर जिस दौर में उन्होंने देश की कमान संभाली है, उनका आगे का रास्ता बेहद चुनौतीपूर्ण नजर आता है। करीब पौने सात करोड़ आबादी वाले इस देश में प्रवासियों की संख्या अच्छी-खासी है और ब्रिटिश नागरिक बाहर से आए नागरिकों को लेकर आशंकित रहने लगे

हैं। यूरोपियन यूनियन से अलग होने का एक कारण यह भी था कि ब्रिटेन के लोग आप्रवासन से उपजी परिस्थितियों को लेकर बैचेन हो रहे थे। ब्रेक्जिट से जनता खुश तो है, लेकिन आर्थिक समस्याओं में अभूतपूर्व वृद्धि देखी गई है।

लिज ट्रस ने लोगों की आर्थिक नीतियों पर नाराजगी दूर करने के साथ ही 2025 में होने वाले आम चुनावों में कंजरवेटिव पार्टी को जीत दिलाने का भरोसा भी दिलाया है। ब्रिटेन में इस वर्ष मुद्रास्फीति नौ फीसद से आगे निकल गई है। नई प्रधानमंत्री को मांग और आपूर्ति में पैदा हुआ असंतुलन दूर कर वस्तुओं और सेवाओं की कीमतें नियंत्रित करना होगा। कर वृद्धि को लेकर लोग कंजरवेटिव पार्टी की नीतियों से नाराज हैं। बोरिस जानसन के इस्तीफे का एक प्रमुख कारण यह भी था। उनके कार्यकाल में राष्ट्रीय बीमा में योगदान को सवा फीसद तक बढ़ा कर कंजरवेटिव पार्टी की सरकार ने दावा किया था कि करों में वृद्धि स्वास्थ्य और सामाजिक देखरेख के क्षेत्र में लगाई जाएगी। लेबर पार्टी का कहना है कि कंजर्वेटिव सरकार द्वारा कामकाजी लोगों पर कर लागत बढ़ाया जाना, जीवन-यापन की चुनौतियों बढ़ाना है।

ब्रिटेन में बढ़ती महंगाई के कारण लोगों के पास अतिरिक्त पैसे नहीं हैं, वहीं यूरोप में जंग छिड़ी है और महामारी के प्रकोप से देश अब भी बाहर नहीं निकल पाया है। ब्रेक्जिट का असर देश में बड़ा मुद्दा है और 2025 में होने वाले आम चुनावों के पहले जनता को संतुष्ट करना उनके लिए चुनौतीपूर्ण होगा। इन सबके बीच सत्तारूढ़ कंजरवेटिव पार्टी की लोकप्रियता में लगातार कमी आई है और वह विपक्षी लेबर पार्टी से पीछे नजर आ रही है। लिज ट्रस को कर कम करने के लिए व्यापारिक भागीदारी बढ़ानी पड़ेगी। इसलिए भारत के लिए यह बेहतर अवसर है। यूरोप में व्यापार करने के लिए भारतीय ब्रिटेन को द्वार समझते हैं, इसलिए अधिकांश भारतीय व्यापारियों ने ब्रिटेन को ठिकाना बनाया हुआ है। भारत के लिहाज से ब्रिटेन का परिवर्तन बेहद दिलचस्प है, क्योंकि पड़ोसी आर्थिक शक्तियों को लेकर इन दोनों देशों में समानता दिखाई पड़ती है। ब्रिटेन यूरोपीय संघ से बाहर हो गया है, जबकि भारत ने भी चीन-केंद्रित क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी में शामिल होने से इनकार कर नए रास्ते खोजने की ओर तेजी से कदम बढ़ाए हैं।

भारत और ब्रिटेन दुनिया की अग्रणी और तेजी से बढ़ती आर्थिक शक्तियों में शुमार हैं। ऐसे में लिज ट्रस की निगाहें भारत पर केंद्रित रहेंगी। इस बात की पूरी संभावना है कि लिज ट्रस भारत से होने वाले मुक्त बाजार समझौते को तुरंत हरी झंडी दे दें। भारत के लिए ब्रिटेन एक महत्त्वपूर्ण आयातक देश है। हालांकि यह भारत को बड़ी मात्रा में निर्यात भी करता रहा है, लेकिन इसमें वृद्धि के स्थान पर गिरावट आई है। ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था में भारत की कंपनियों की अहम भूमिका है। भारत की कई कंपनियां ब्रिटेन में काम कर रही हैं और इससे लाखों रोजगार जुड़े हुए हैं। उच्च शिक्षा की दृष्टि से भारतीय छात्रों के लिए ब्रिटेन पसंदीदा देश है। दोनों देशों के आपसी संबंधों की मजबूती में वहां रह रहे करीब पंद्रह लाख प्रवासी भारतीयों की अहम भूमिका है। भारत से संबंधों को मजबूत करके लिज दोहरा लाभ उठा सकती हैं।

भारत और ब्रिटेन के बीच रणनीतिक संबंध बढ़ने की असीम संभावनाएं हैं। ब्रिटेन का महत्त्वपूर्ण भागीदार अमेरिका है और बीते कुछ वर्षों में अमेरिका और भारत के संबंधों में गर्मजोशी देखी गई है। खासकर हिंद प्रशांत क्षेत्र में चीन की चुनौती से निपटने के लिए भारत और अमेरिका में सामरिक सहयोग बढ़ा है और अब इसमें ब्रिटेन भी शामिल हो गया है। भारत और ब्रिटेन भी समुद्री क्षेत्र में अपने सहयोग को मजबूत करने पर सहमत हुए हैं और दक्षिण-पूर्व एशिया में समुद्री सुरक्षा विषयों पर यह भागीदारी ज्यादा मजबूत हो सकती है। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में बाजार हिस्सेदारी और रक्षा विषयों पर 2015 में दोनों देशों के बीच समझौते हुए। भारत से संबंधों को मजबूत करके ब्रिटेन हिंद-प्रशांत क्षेत्र की विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में अवसरों का लाभ उठाने की कोशिश कर रहा है। हिंद-प्रशांत क्षेत्र से लगे अड़तीस देशों में दुनिया की करीब पैंसठ फीसद आबादी रहती है। विकासशील देशों के प्रमुख आर्थिक संगठन आसियान की आर्थिक महत्त्वाकांक्षी भागीदारियां,

असीम खनिज संसाधनों पर चीन की नजर, कई देशों के बंदरगाहों पर कब्जा करने की चीन की सामरिक नीति तथा क्वाड की रणनीतिक साझेदारी इस क्षेत्र के प्रमुख राजनीतिक और सामरिक प्रतिद्वंद्विता से जुड़े मुद्दे रहे हैं।

चीनी प्रभाव के अभूतपूर्व वैश्विक खतरों से निपटने के लिए अमेरिका हिंद प्रशांत क्षेत्र में संभावनाएं निरंतर तलाश रहा है। अमेरिका को लगता है कि चीन को नियंत्रित और संतुलित करने के लिए एशिया को कूटनीति के केंद्र में रखना होगा। इस नीति पर बराक ओबामा, ट्रंप के बाद अब बाइडेन भी आगे बढ़ रहे हैं। अमेरिका रणनीतिक भागीदारी के साथ आर्थिक और कारोबारी नीतियों पर आगे बढ़ना चाहता है। इसीलिए क्वाड के बाद अब उसने इंडो-पैसिफिक इकोनामिक फ्रेमवर्क की रणनीति पर आगे बढ़ने की बात कही है, जिसमें व्यापारिक सुविधाओं के साथ आपसी सहयोग बढ़ाना है।

इस वर्ष भारत और ब्रिटेन के बीच जो प्रमुख समझौते हुए थे, उनमें ब्रिटेन द्वारा नए लड़ाकू विमानों की प्रौद्योगिकी और नौवहन प्रौद्योगिकी पर भारत के साथ सहयोग और सुरक्षा सहयोग में बदलाव लाने की प्रतिबद्धता पर जोर दिया गया था। इसके साथ ही मुक्त, खुला और सुरक्षित हिंद-प्रशांत को समर्थन देने के लिए सहयोग और संपर्क बढ़ाने की बात कही गई थी। दोनों प्रधानमंत्रियों ने रोडमैप 2030 लागू करने के प्रति प्रतिबद्धता जताते हुए द्विपक्षीय व्यापार को दोगुना करने पर जोर दिया था।

भारत की असल चिंता चीन है। सीमा पर तनाव के बाद भी भारत की व्यापार को लेकर चीन पर निर्भरता कम नहीं हो रही है और भारत इस असंतुलन को दूर करना चाहता है। भारत अब भी चीन से सबसे अधिक चीजें आयात कर रहा है। मेक इन इंडिया में ब्रिटिश निवेश बढ़ सकता है और भारत के लिए यह मुफीद भी होगा। अमेरिका हिंद प्रशांत क्षेत्र में सप्लाई चेन की मजबूती और डिजिटल इकोनामी पर रणनीतिक सहयोग चाहता है। इसमें भारत के साथ ब्रिटेन की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। हिंद प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका की चीनी खतरे से निपटने और व्यापार में भागीदारी बढ़ाने के लिए आइपीईएफ की रणनीतिक योजना को आगे बढ़ाया है, जिसमें कुल तेरह देश अमेरिका, आस्ट्रेलिया, ब्रूनेई, भारत, इंडोनेशिया, जापान, दक्षिण कोरिया, मलेशिया, न्यूजीलैंड, फिलीपींस, सिंगापुर, थाईलैंड और विएतनाम शामिल हैं। इसमें से अधिकांश देशों के बाजार पर चीन का गहरा प्रभाव है। ब्रिटेन चीन पर इन देशों की निर्भरता कम करके स्वयं के लिए विकल्प तलाश रहा है।

लिज ट्रस के लिए अपने देश को मजबूत करने के कई अवसर हैं और उन्हें आगे बढ़ कर इन अवसरों का फायदा उठाना होगा।

राष्ट्रीय सहारा

Date:07-09-22

भरण-पोषण के सवाल

कमलेश जैन

बदलते वक्त के साथ वृद्धावस्था की तरफ जाना एक चुनौती से कम नहीं है। मेरी देखभाल कौन करेगा, घर से बाहर तो नहीं निकलना है? बीमार हो जाऊं तो इलाज होगा या नहीं? दिन में तीन बार खाना उपलब्ध होगा या नहीं? वे सुरक्षित हैं, या नहीं अपने घर में? जिसे घर में 24 घंटे देखभाल के लिए रखा है, उसका व्यवहार, नीयत कैसी है, आदि आदि यानी जीवन अनेकानेक समस्याओं से घिर जाता है। पर कहते हैं न कि जिस घड़ी समस्या का जन्म होता है, उसी वक्त जुड़वा बच्चों की तरह समाधान का भी जन्म हो जाता है। बस हमें ज्ञान नहीं होता।

तो आज हमारे पास वरिष्ठ नागरिक तथा माता-पिता भरण-पोषण एवं कल्याण कानून, 2007 है, जो हमारी रक्षा करने में सक्षम है। वरिष्ठ व्यक्ति वह है, जो 60 वर्ष या उससे अधिक आयु का है। माता-पिता या ऐसा व्यक्ति जो अकेला है-पति-पत्नी या बच्चे नहीं हैं। पर जिसकी संपत्ति दूर के रिश्तेदारों को मृत्यु पश्चात मिलने वाली है। इनमें वे व्यक्ति भी आते हैं, जिनके पास संपत्ति नहीं है, पर वरिष्ठ हैं। ऐसे व्यक्तियों की देखभाल, इलाज का जिम्मा राज्य उठाता है। राज्य में कई सीनियर सिटिजन ट्राइब्यूनल होते हैं-'क्षेत्रवार' जिससे कि उनके इलाके में रहने वाले परेशान वरिष्ठ व्यक्ति जाकर अपनी व्यथा बताएं और जल्दी निदान पाएं। वरिष्ठ नागरिकों और माता-पिता की देखभाल, प्यार से सेवा करना बच्चों की जिम्मेदारी है, कर्तव्य है, कानूनन भी एवं नैतिक रूप से भी। वे नैतिक रूप से ना करें तो कानून को अपनी जिम्मेदारी निभाना आता है।

वे वरिष्ठ नागरिक एवं माता-पिता जिन्हें एक सामान्य जीवन नहीं जीने दिया जा रहा और अभावरहित जीवन जीने को विवश किया जा रहा है, वे विभिन्न क्षेत्रों में बने ट्राइब्यूनल में एक याचिका डाल सकते हैं। यदि वे ऐसा करने में अक्षम हैं, तो किसी भी व्यक्ति के द्वारा या ट्राइब्यूनल द्वारा निर्धारित व्यक्ति के माध्यम से याचिका डाली जा सकती है। या कोई भी उपाय न हो तो ट्राइब्यूनल को किसी तरह जानकारी मिले, अखबार, फोन, संस्था, चिट्ठी द्वारा तो ट्राइब्यूनल खुद-ब-खुद भी एक्शन (कार्रवाई) ले सकता है। इसके बाद वारिस-बच्चे या संपत्ति पाने वाले व्यक्ति को नोटिस देकर बुलाया जाएगा और मामले का निबटारा किया जाएगा। बच्चों या वारिसों को उचित आदेश दिया जाएगा-मासिक भत्ता (रुपयों में) देने का या याचिका के आवश्यकतानुरूप जितने बच्चे/वारिस हैं, सबके खिलाफ कार्रवाई होगी। सबको यथायोग्य आदेश दिया जाएगा। जहां कई बच्चों/वारिसों में से एक की मृत्यु हो जाएगी तो भी बाकी बच्चों को जिम्मेदारी का निर्वहन करना होगा। यदि बच्चे/वारिस आदेश का पालन नहीं करते तो उनके खिलाफ वारंट जारी होगा, जुर्माना लगाया जाएगा-तब भी आदेश का पालन ना हो तो एक महीने या जब तक भरण-पोषण राशि नहीं दी जाती, तब तक जेल में रहना होगा। आदेश की अवहेलना के तीन महीने के अंदर ट्राइब्यूनल को सूचना/याचिका देना बच्चों की जिम्मेदारी है। कानूनन भी, नैतिक रूप से भी। वे नैतिक रूप से न करें तो कानून को अपनी जिम्मेदारी निभाना आता है। भरण-पोषण की याचिका एक/से ज्यादा बच्चों/या लाभार्थी के विरुद्ध दायर की जा सकती है। यह याचिका या तो प्रार्थी जहां रहता है, उसके दायरे के अंतर्गत आने वाले ट्राइब्यूनल में फाइल हो सकती है या वहां जहां बच्चे या रिश्तेदार रहते हैं। बच्चों या रिश्तेदार को ट्राइब्यूनल में बुलाने के लिए ट्राइब्यूनल के अधिकार-प्रथम श्रेणी के न्यायिक अधिकारी मजिस्ट्रेट जैसे ही हैं। जैसे-नोटिस भेजना, नहीं आने पर जमानती वारंट, उसकी अवहेलना करने पर गैर-जमानती वारंट। यदि बच्चे/रिश्तेदार देश

से बाहर रहते हैं, तो ट्राइब्यूनल का आदेश-सेंट्रल गर्वनमेंट के आदेशानुसार प्रेषित किया जाएगा। मामले की सुनवाई के पहले मामला काउंसलिंग के लिए काउंसलिएशन ऑफिसर को दिया जाएगा और जो यह सुझाव ट्राइब्यूनल को देगा कि क्या करना उचित होगा। किसी भी जिला अदालत से प्रार्थी को ज्यरिसडिक्शन वाले ट्राइब्यूनल का पता और नम्बर लिया जा सकता है। कोई लीगल एड वकील भी यदि पैसा का अभाव है तो। जिनका दुनिया में कोई नहीं है, और ना ही उनके पास कोई संपत्ति या आसरा है, तो वे भी ट्राइब्यूनल आ सकते हैं। उन्हें सरकार किसी उचित जगह-ओल्डएज होम या दूसरी जगह रहने, खाने, चिकित्सा की भी व्यवस्था करेगी।

अंततः मुस्कुराएं आपकी मदद करने वाले ट्राइब्यूनल हैं। पहले इस एक्ट का वे लोग फायदा नहीं उठाते थे, जिन्होंने अपनी संपत्ति एक्ट लागू होने के बाद बच्चों या वारिसों के नाम कर दी थी पर अब एक फैसले के बाद संपत्ति कभी भी किसी के नाम की हो-वारिसों को संपत्ति देने वाले की सेवा जीवन भर करनी होगी। यकीनन यह व्यवस्था बुढ़ापे में असहाय हुए लोगों के जीवन को उन परेशानियों से निजात दिलाएगी जो जीवन की संध्याकाल में वरिष्ठ नागरिकों को वंचना से भर देती हैं। कानून का संबल मिलने से अब उन्हें बराबर अहसास रहेगा कि उनकी चिंता करने वाला कोई तो है-भले ही अपने उन्हें अनदेखा कर रहे हों लेकिन वे कानून की मदद से सबल हो चुके होंगे। उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकेगी।